

राजस्थान उच्च न्यायालय

जयपुर बेंच

एस.बी. आपराधिक विविध (याचिका) संख्या 1623/2019

रश्मी खंडेलवाल पत्नी श्री राजेंद्र सिंह शर्मा, पुत्री श्री प्रमोद खंडेलवाल, निवासी सहयोग नगर, वर्तमान निवासी खंडेलवाल घीया माली की हवेली, पत्थर की टाल के पास, अनाह गेट, बजरिया, पुलिस स्टेशन अटलबंध, जिला भरतपुर, राज.

-----याचिकाकर्ता

बनाम

कन्हियालाल पुत्र श्री रमेश चंद, उम्र लगभग 38 वर्ष, निवासी खेड़ापति मोहल्ला, पुलिस थाना अटलबंध, जिला भरतपुर, राज.

-----उत्तरदाता

संबंधित

एस.बी. आपराधिक विविध (याचिका) संख्या 1672/2019

राजेंद्र सिंह शर्मा पुत्र स्वर्गीय श्री शोभाराम शर्मा, निवासी सहयोग नगर, भरतपुर, पुलिस थाना मथुरा गेट, भरतपुर, राज.

-----याचिकाकर्ता

बनाम

गणेश कुमार पुत्र श्री बलदेव सिंह, निवासी सूरजपोल गेट के बाहर, भरतपुर, पुलिस थाना मथुरा गेट, भरतपुर, राज.

-----उत्तरदाता

एस.बी. आपराधिक विविध (याचिका) संख्या 1674/2019

रश्मी खंडेलवाल पुत्री श्री प्रमोद खंडेलवाल, पत्नी श्री राजेंद्र सिंह शर्मा, उम्र लगभग 38 वर्ष, निवासी पत्थर की टाल के पीछे, घीया मालियों की हवेली, पुलिस थाना अटलबंध, भरतपुर, राज.

-----याचिकाकर्ता

बनाम

गणेश कुमार पुत्र श्री बलदेव सिंह, उम्र लगभग 32 वर्ष, निवासी सूरजपोल गेट के बाहर, भरतपुर, पुलिस स्टेशन मथुरा गेट, भरतपुर, राज.

-----उत्तरदाता

याचिकाकर्ता (ओं) की ओर से	:	श्री योगेश सिंघल
उत्तरदाता (ओं) की ओर से	:	श्री जितेंद्र सिंह

माननीय श्रीमान. जस्टिस अनूप कुमार ढांड

आदेश

आरक्षित तिथि : 10/01/2025

घोषित तिथि : 16/01/2025

रिपोर्ट योग्य

1. इस याचिका में यह मुद्दा शामिल है कि "क्या परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 143 ए के अंतर्गत निहित संशोधित प्रावधान, इस प्रावधान के अधिनियमन और प्रवर्तन से पहले दायर की गई शिकायत पर लागू होगा?"
 2. चूँकि इन याचिकाओं में विधि और तथ्यों का एक ही प्रश्न शामिल है। अतः, पक्षकारों के अधिवक्ताओं की सहमति से, इन सभी मामलों को अंतिम निपटान हेतु लिया गया है और इस सामान्य आदेश द्वारा इनका निर्णय किया जाता है।
-

3. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने दलील दी कि प्रतिवादी-शिकायतकर्ता (जिसे आगे शिकायतकर्ता कहा जाएगा) ने अभियुक्त-याचिकाकर्ता (जिसे आगे याचिकाकर्ता कहा जाएगा) के विरुद्ध परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 (जिसे आगे '1881 का अधिनियम' कहा जाएगा) की धारा 138 के अंतर्गत दंडनीय अपराध के लिए तीन अलग-अलग मौकों पर यानी 28.08.2017, 01.04.2017 और 11.08.2017 को तीन अलग-अलग शिकायतें दर्ज की हैं। अधिवक्ता ने दलील दी कि धारा 138 के अंतर्गत शिकायत दर्ज करते समय, 1881 के अधिनियम के अंतर्गत शिकायतकर्ता को चेक राशि के 20% के अंतरिम मुआवजे के भुगतान का कोई प्रावधान नहीं था।

4. अधिवक्ता ने आगे कहा कि धारा 143 ए के तहत संशोधित प्रावधान 01.09.2018 से लागू हुआ, जिसमें शिकायतकर्ता को अंतरिम मुआवजे के भुगतान के लिए निर्देश जारी करने का प्रावधान शामिल किया गया।

5. अधिवक्ता ने दलील दी कि 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए के अंतर्गत निहित संशोधित प्रावधान, इस संशोधन से पहले दायर की गई शिकायतों पर पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू नहीं किया जा सकता। अधिवक्ता ने यह भी दलील दी कि 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए के अंतर्गत निहित संशोधित प्रावधान 01.09.2018 को या उसके बाद दायर की गई शिकायतों पर लागू होंगे।

6. अधिवक्ता ने दलील दी कि मामले के भौतिक पहलू को नजरअंदाज करते हुए, निचली अदालत ने याचिकाकर्ता को शिकायतकर्ता को चेक राशि का 20% अंतरिम मुआवजा देने का निर्देश देने वाला आदेश पारित करके गंभीर गलती की है। अधिवक्ता ने दलील दी कि ऐसा निर्देश ट्रायल कोर्ट द्वारा जारी नहीं किया जा सकता। अपने तर्कों के समर्थन में, उन्होंने **सिद्धार्थ जैन बनाम निधि फाइनेंशियल सर्विसेज** के मामले में इस अदालत की समन्वय पीठ द्वारा पारित फैसले पर भरोसा जताया है, जिसकी रिपोर्ट **2023 (4) डब्ल्यूएलसी 719 (राजस्थान)** में दी गई है। वकील ने दलील दी कि इन परिस्थितियों में, निचली अदालत द्वारा पारित आदेश कानून की नजर में टिकने योग्य नहीं है और इसे रद्द किया जाना चाहिए।

7. इसके विपरीत, शिकायतकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया और प्रस्तुत किया कि पीड़ित पक्ष को देय राशि के भुगतान में आरोपी व्यक्तियों द्वारा अपनाई गई देरी की रणनीति से बचने के लिए, विधायिका ने उक्त संशोधन लाया है। उन्होंने कहा कि शिकायत के लंबित रहने के दौरान शिकायतकर्ता को अंतरिम मुआवजा देने के लिए आरोपी को निर्देश जारी करने के लिए 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए को चित्र में लाया गया था। अधिवक्ता ने कहा कि इसी तरह, अपील के स्तर पर 1881 के अधिनियम की धारा 148 के तहत समान प्रावधान रखा गया था,

जिसमें बकाया राशि के 20% के भुगतान का समान निर्देश जारी किया जा सकता है। अधिवक्ता ने कहा कि 1881 के अधिनियम की धारा 148 की व्याख्या करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सुरिंदर सिंह देसवाल और अन्य बनाम के मामले में वीरेंद्र गांधी ने 2019(8) में रिपोर्ट दी कि स्केल 445 ने माना है कि 1881 के अधिनियम की धारा 148 के संशोधित प्रावधान को संशोधन से पहले दायर शिकायतों पर भी पूर्वव्यापी प्रभाव दिया जा सकता है। अधिवक्ता ने दलील दी कि इन परिस्थितियों में, विचारण न्यायालय ने विवादित आदेश पारित करने में कोई त्रुटि नहीं की है जिसके लिए इस न्यायालय के किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता हो।

8. सुनवाई की गई। बार में प्रस्तुत किए गए तर्कों पर विचार किया गया तथा रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया गया।

9. इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि शिकायतकर्ता ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध 1881 के अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत क्रमशः 28.08.2017, 01.04.2017 और 11.08.2017 को ट्रायल कोर्ट में तीन अलग-अलग शिकायतें प्रस्तुत कीं, जिनमें आरोप लगाया गया कि याचिकाकर्ता द्वारा जारी किए गए चेक अनादृत हो गए। इस तथ्य पर भी कोई विवाद नहीं है कि कथित अपराध के घटित होने और शिकायत दर्ज कराने के समय, मुकदमे के लंबित रहने के दौरान

अभियुक्त द्वारा 1881 के अधिनियम के अंतर्गत शिकायतकर्ता को किसी भी अंतरिम मुआवजे के भुगतान का कोई प्रावधान नहीं था।

10. विधानमंडल ने 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए के रूप में एक नया प्रावधान शामिल करके अभियुक्त द्वारा शिकायतकर्ता को अंतरिम मुआवजे के भुगतान हेतु एक नया प्रावधान प्रस्तुत किया और यह नया संशोधित प्रावधान 01.09.2018 से लागू हो गया। 1881 के अधिनियम की नई धारा 143 ए इस प्रकार है:-

“धारा 143 ए: अंतरिम मुआवजे का निर्देश देने की शक्ति

(1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में किसी बात के होते हुए भी, धारा 138 के अधीन किसी अपराध का विचारण करने वाला न्यायालय चेक के लेखक को शिकायतकर्ता को अंतरिम प्रतिकर देने का आदेश दे सकेगा-

(क) संक्षिप्त सुनवाई या समन मामले में, जहां वह शिकायत में लगाए गए आरोप के लिए दोषी नहीं होने का दावा करता है; और

(ख) किसी अन्य मामले में, आरोप तय होने पर।

(2) उपधारा (1) के अधीन अंतरिम प्रतिकर चेक की राशि के बीस प्रतिशत से अधिक नहीं होगा।

(3) अंतरिम प्रतिकर उपधारा (1) के अधीन आदेश की तारीख से साठ दिन के भीतर या चेक जारी करने वाले द्वारा पर्याप्त कारण

दर्शाए जाने पर न्यायालय द्वारा निर्देशित तीस दिन से अनधिक की अतिरिक्त अवधि के भीतर संदत्त किया जाएगा।

(4) यदि चेक जारी करने वाले को दोषमुक्त कर दिया जाता है, तो न्यायालय शिकायतकर्ता को निर्देश देगा कि वह अंतरिम मुआवजे की राशि, भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा प्रकाशित बैंक दर पर ब्याज सहित, जो प्रासंगिक वित्तीय वर्ष के प्रारंभ में प्रचलित हो, आदेश की तारीख से साठ दिन के भीतर, या शिकायतकर्ता द्वारा पर्याप्त कारण बताए जाने पर न्यायालय द्वारा निर्देशित तीस दिन से अनधिक की ऐसी अतिरिक्त अवधि के भीतर, वापस कर दे।

(5) इस धारा के अधीन देय अंतरिम प्रतिकर की वसूली इस प्रकार की जा सकेगी मानो वह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 421 के अधीन जुर्माना हो।

(6) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 138 के अधीन अधिरोपित जुर्माने की राशि या धारा 357 के अधीन अधिनिर्णीत प्रतिकर की राशि में से इस धारा के अधीन अंतरिम प्रतिकर के रूप में संदत्त या वसूल की गई राशि कम कर दी जाएगी।"

11. 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए के तहत नए प्रावधान के आधार पर, तथा उसकी ताकत के साथ, ट्रायल कोर्ट ने याचिकाकर्ता को निर्देश दिया है कि वह चेक राशि का 20% अंतरिम मुआवजे के रूप में शिकायतकर्ता को भुगतान करे, जैसा कि विवादित आदेश पारित करके किया गया है।
-

12. इन आदेशों से व्यथित होकर याचिकाकर्ताओं ने इन्हें चुनौती देते हुए इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

13. 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए के मात्र अवलोकन से पता चलता है कि 1881 के अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत किसी अपराध की सुनवाई करते समय, न्यायालय चेक जारीकर्ता को शिकायतकर्ता को अंतरिम मुआवजा देने का निर्देश दे सकता है, अर्थात् चेक की राशि के 20% से अधिक नहीं। 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए की उप-धारा (4) में प्रावधान है कि यदि चेक जारीकर्ता को बरी कर दिया जाता है, तो न्यायालय शिकायतकर्ता को चेक जारीकर्ता को उतनी ही राशि वापस करने का निर्देश देगा।

14. यह तथ्य निर्विवाद है कि शिकायतकर्ता द्वारा याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध 1881 के अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत तीनों शिकायतें वर्ष 2017 में, अर्थात् 1881 के अधिनियम की संशोधित धारा 143 ए के अधिनियमन, प्रवर्तन और सम्मिलन से पूर्व, प्रस्तुत की गई थीं। अंतरिम मुआवजे के भुगतान का नया प्रावधान 01.09.2018 को अस्तित्व में आया और प्रकाश में आया। अतः अब, इन याचिकाओं में जिस सटीक मुद्दे पर निर्णय लिया जाना आवश्यक है, वह यह है कि "क्या इस नए प्रावधान को पूर्वव्यापी प्रभाव या भावी प्रभाव के साथ लागू किया जा सकता है?"

15. आयकर अधिनियम, 1961 में सम्मिलित धारा 158-बीई के संदर्भ में 'कानून की पूर्वव्यापीता' से संबंधित सामान्य सिद्धांतों पर विचार करते समय, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **आयकर आयुक्त (केंद्रीय)-I, नई दिल्ली बनाम वाटिका टाउनशिप प्राइवेट लिमिटेड के मामले में 2015(1) एससीसी 1** में रिपोर्ट किया गया था, जैसा कि निम्नानुसार देखा गया था:-

“28. किसी कानून की व्याख्या कैसे की जानी चाहिए, इसके लिए विभिन्न नियमों में से एक स्थापित नियम यह है कि जब तक कोई विपरीत आशय प्रकट न हो, तब तक यह माना जाता है कि किसी कानून का पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं होना चाहिए। इस नियम के पीछे का विचार यह है कि एक वर्तमान कानून को वर्तमान गतिविधियों पर लागू होना चाहिए। आज पारित कानून अतीत की घटनाओं पर लागू नहीं हो सकता। यदि हम आज कुछ करते हैं, तो हम उसे आज के और लागू कानून को ध्यान में रखते हुए करते हैं, न कि कल के पीछे की ओर समायोजन को ध्यान में रखते हुए। कानून की प्रकृति में हमारा विश्वास इस आधार पर आधारित है कि प्रत्येक मनुष्य को विद्यमान कानून पर निर्भर रहकर अपने कार्यों को व्यवस्थित करने का अधिकार है और उसे यह नहीं लगना चाहिए कि उसकी योजनाएँ पूर्वव्यापी रूप से अस्त-व्यस्त हो गई हैं। कानून के इस सिद्धांत को लेक्स प्रोस्पिसिट नॉन रेस्पिसिट के रूप में जाना जाता है: कानून आगे की ओर देखता है, पीछे की ओर नहीं। जैसा कि फिलिप्स बनाम आयर में देखा गया था, एक पूर्वव्यापी कानून उस सामान्य सिद्धांत के विपरीत है कि जिस कानून द्वारा मानव जाति के आचरण को विनियमित किया जाना है, जब उसे भविष्य के कार्यों से निपटने के लिए पहली बार पेश किया

जाता है, तो उसे तत्कालीन मौजूदा कानून के विश्वास पर किए गए पिछले लेन-देन के स्वरूप को नहीं बदलना चाहिए। कानून।"

16. इसी प्रकार, आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1987 की धारा 20(4)(बीबी) के परिणामस्वरूप संहिता के प्रावधानों के संशोधित अनुप्रयोग के प्रभाव पर विचार करते समय, जिसके तहत चालान या आरोप-पत्र दाखिल करने की अवधि बढ़ सकती है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **हितेंद्र विष्णु ठाकुर और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य 1994(4) एससीसी 602** में रिपोर्ट किए गए संबंधित प्रावधानों के पूर्वव्यापी संचालन के मुद्दे पर विचार किया:

-

"26. निर्दिष्ट न्यायालय ने माना है कि यह संशोधन पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू होगा और उन लंबित मामलों पर लागू होगा जिनमें संशोधन अधिनियम के लागू होने की तिथि तक जाँच पूरी नहीं हुई थी और तब तक न्यायालय में चालान दाखिल नहीं किया गया था। इस न्यायालय द्वारा विभिन्न मामलों में निर्धारित विधि से, संशोधन अधिनियम के दायरे और उसके पूर्वव्यापी प्रभाव के संबंध में निम्नलिखित उदाहरणात्मक, यद्यपि संपूर्ण नहीं, सिद्धांत उभर कर आते हैं:

(i) एक कानून जो मूलभूत अधिकारों को प्रभावित करता है, उसे तब तक लागू होने में भावी माना जाता है जब तक कि उसे पूर्वव्यापी रूप से लागू न कर दिया जाए, चाहे वह स्पष्ट रूप से हो या आवश्यक इरादे से, जबकि एक कानून जो केवल प्रक्रिया को प्रभावित करता है, जब तक कि ऐसा निर्माण शाब्दिक रूप से असंभव न हो, उसके लागू होने में पूर्वव्यापी माना जाता है, उसे

विस्तारित अर्थ नहीं दिया जाना चाहिए और उसे स्पष्ट रूप से परिभाषित सीमाओं तक ही सीमित रखा जाना चाहिए।

(ii) फोरम और सीमा से संबंधित कानून प्रकृति में प्रक्रियात्मक है, जबकि कार्रवाई के अधिकार और अपील के अधिकार से संबंधित कानून, भले ही उपचारात्मक हो, प्रकृति में मौलिक है।

(iii) प्रत्येक वादी को मूल कानून में निहित अधिकार प्राप्त है, लेकिन प्रक्रियात्मक कानून में ऐसा कोई अधिकार नहीं है।

(iv) सामान्यतः किसी प्रक्रियात्मक कानून को पूर्वव्यापी रूप से लागू नहीं किया जाना चाहिए, जहाँ इसका परिणाम नई अक्षमताओं या दायित्वों का सृजन करना हो या पहले से संपन्न लेन-देन के संबंध में नए कर्तव्य आरोपित करना हो।

(v) कोई कानून जो न केवल प्रक्रिया में परिवर्तन करता है बल्कि नए अधिकार और दायित्व भी सृजित करता है, उसे भावी परिचालन माना जाएगा, जब तक कि अन्यथा स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ द्वारा प्रावधान न किया गया हो।”

17. **हितेंद्र विष्णु ठाकुर (उपरोक्त)** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय के बिंदु संख्या (iv) और (v) में उल्लिखित सिद्धांत वर्तमान तथ्यात्मक स्थिति के अनुरूप हैं।

18. यह न्यायालय इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं कर सकता है कि, 1881 के अधिनियम में नए प्रावधान, यानी धारा 143 ए को शामिल करने से पहले, अधिनियम में 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध के होने से

पहले शिकायतकर्ता को चेक राशि का 20% अंतरिम मुआवजा देने के लिए चेक जारी करने वाले को निर्देश जारी करने का कोई प्रावधान नहीं था।

19. साथ ही, 1881 के अधिनियम में 01.09.2018 से धारा 148 के रूप में एक नया प्रावधान जोड़ा गया, जिससे अपीलीय न्यायालय को दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील के लंबित रहने के दौरान भुगतान का आदेश देने का अधिकार मिल गया। सुलभ संदर्भ के लिए, 1881 के अधिनियम की धारा 148 को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया गया है:-

“धारा 148: दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील लंबित रहने तक भुगतान का आदेश देने की अपीलीय न्यायालय की शक्ति।

(1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी, धारा 138 के अधीन दोषसिद्धि के विरुद्ध अपीलकर्ता द्वारा की गई अपील में, अपील न्यायालय अपीलार्थी को ऐसी राशि जमा करने का आदेश दे सकेगा जो विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत जुर्माने या प्रतिकर का कम से कम बीस प्रतिशत होगी:

बशर्ते कि इस उपधारा के तहत देय राशि धारा 143ए के तहत अपीलकर्ता द्वारा भुगतान किए गए किसी भी अंतरिम मुआवजे के अतिरिक्त होगी।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट रकम आदेश की तारीख से साठ दिन के भीतर या तीस दिन से अनधिक की ऐसी अतिरिक्त अवधि के भीतर, जैसा कि अपीलार्थी द्वारा पर्याप्त कारण दर्शाए जाने पर न्यायालय द्वारा निर्देशित किया जाए, जमा की जाएगी।

(3) अपीलीय न्यायालय अपील के लंबित रहने के दौरान किसी भी समय अपीलकर्ता द्वारा जमा की गई राशि को शिकायतकर्ता को जारी करने का निर्देश दे सकता है:

बशर्ते कि यदि अपीलकर्ता को दोषमुक्त कर दिया जाता है, तो न्यायालय शिकायतकर्ता को निर्देश देगा कि वह इस प्रकार जारी की गई राशि को, भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा प्रकाशित बैंक दर पर ब्याज सहित, जो प्रासंगिक वित्तीय वर्ष के आरंभ में प्रचलित हो, आदेश की तारीख से साठ दिनों के भीतर, या शिकायतकर्ता द्वारा पर्याप्त कारण दिखाए जाने पर न्यायालय द्वारा निर्देशित तीस दिनों से अनधिक की अतिरिक्त अवधि के भीतर अपीलकर्ता को वापस कर दे।”

20. यहां यह ध्यान देने योग्य है कि दोनों नए प्रावधान अर्थात् धारा 143 ए और धारा 148 को 1881 के अधिनियम में 01.09.2018 से सम्मिलित किया गया था।

21. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **सुरिंदर सिंह देसवाल** (उपरोक्त) के मामले में माना है कि 01.09.2018 को संशोधित 1881 के अधिनियम की धारा 148 के तहत निहित नए प्रावधान 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध के लिए दोषसिद्धि और सजा के आदेश के खिलाफ अपील पर लागू होंगे, यहां तक कि उन मामलों में भी जहां 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध के लिए आपराधिक शिकायतें संशोधित अधिनियम संख्या 20/2018 से पहले यानी

01.09.2018 से पहले दायर की गई थीं और इसे पैरा 8, 8.1 और 9 में निम्नानुसार माना गया है: -

"8. अपीलकर्ताओं की ओर से यह मामला है कि चूंकि एन.आई. अधिनियम की धारा 138 के तहत अपीलकर्ताओं के खिलाफ आपराधिक शिकायतें संशोधन अधिनियम संख्या 20/2018 से पहले दर्ज/दायर की गई थीं, जिसके द्वारा एन.आई. अधिनियम की धारा 148 में संशोधन किया गया और इसलिए एन.आई. अधिनियम की संशोधित धारा 148 लागू नहीं होगी। हालांकि, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि जिस समय एन.आई. अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध के लिए अपीलकर्ताओं की सजा के खिलाफ अपील की गई थी, उस समय एन.आई. अधिनियम की धारा 148 में संशोधन करने वाला संशोधन अधिनियम संख्या 20/2018 1.9.2018 से लागू हुआ था। यहां तक कि, जिस समय अपीलकर्ताओं ने सजा और सजा को चुनौती देने वाली अपील लंबित रहने तक सजा को निलंबित करने के लिए सीआरपीसी की धारा 389 के तहत आवेदन प्रस्तुत किया, उस समय एन.आई. अधिनियम की संशोधित धारा 148 लागू हो गई 1.9.2018 से कानून में लाया गया था। इसलिए, एन.आई. अधिनियम की धारा 148 में संशोधन के उद्देश्य और प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए और सीआरपीसी की धारा 389 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए सजा को निलंबित करते हुए, जब प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपीलकर्ताओं को विद्वान विचारण अदालत द्वारा लगाए गए जुर्माने/मुआवजे की राशि का 25% जमा करने का निर्देश दिया, तो इसे एन.आई. अधिनियम की धारा 148 में संशोधन के उद्देश्यों और कारणों के कथन के पूर्णतः अनुरूप कहा जा सकता है।

8.1 यह देखने और पाने के बाद कि आसानी से अपील दायर करने और कार्यवाही पर स्थगन प्राप्त करने के कारण अस्वीकृत चेक जारी करने वालों की देरी की रणनीति के कारण, एनआई अधिनियम की धारा 138 के अधिनियमन का उद्देश्य और प्रयोजन विफल हो रहा था, संसद ने एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन करना उचित समझा है, जिसके द्वारा एनआई अधिनियम की धारा 138 के तहत सजा के आदेश को चुनौती देने वाली अपील में प्रथम अपीलीय न्यायालय को दोषी अभियुक्त - अपीलकर्ता को ऐसी राशि जमा करने का निर्देश देने की शक्ति प्रदान की जाती है जो ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने या मुआवजे का कम से कम 20% होगा। एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन से, यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्त - अपीलकर्ता के अपील का कोई निहित अधिकार छीन लिया गया है और/या प्रभावित हुआ है। इसलिए, अपीलकर्ताओं की ओर से दलील दी गई अधिनियम को पूर्वव्यापी रूप से लागू नहीं किया जाएगा और विशेष रूप से 1.9.2018 से पहले दर्ज मामलों/शिकायतों के संबंध में लागू नहीं होगा, इसमें कोई सार नहीं है और इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है, क्योंकि एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन से अपील का कोई भी मूल अधिकार नहीं छीना गया है और/या प्रभावित नहीं हुआ है। इसलिए गरिकापट्टी वीरया (उपरोक्त) और वीडियोकॉन इंटरनेशनल लिमिटेड (उपरोक्त) के मामलों में इस न्यायालय के फैसले, जिन पर अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने भरोसा किया है, मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होंगे। इसलिए, एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन के उद्देश्यों और कारणों के कथन पर विचार करते हुए, जैसा कि ऊपर कहा गया है, संशोधित एनआई अधिनियम की धारा 148 की उद्देश्यपूर्ण व्याख्या पर, हम इस राय के हैं कि संशोधित

एनआई अधिनियम की धारा 148, एनआई की धारा 138 के तहत अपराध के लिए दोषसिद्धि और सजा के आदेश के खिलाफ अपील के संबंध में लागू होगी। अधिनियम, यहाँ तक कि ऐसे मामले में भी जहाँ एन.आई. अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत अपराध के लिए आपराधिक शिकायतें संशोधन अधिनियम संख्या 20/2018 से पहले, अर्थात् 01.09.2018 से पहले दायर की गई थीं, लागू नहीं होगी। यदि ऐसी उद्देश्यपूर्ण व्याख्या नहीं अपनाई जाती है, तो उस स्थिति में, एन.आई. अधिनियम की धारा 148 में संशोधन का उद्देश्य और प्रयोजन विफल हो जाएगा। अतः, विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा अपीलकर्ताओं को संशोधित एन.आई. अधिनियम की धारा 148 पर विचार करते हुए, विद्वान विचारण अदालत द्वारा लगाए गए जुर्माने/मुआवजे की राशि का 25% जमा करने का निर्देश देने में कोई त्रुटि नहीं हुई है।

9. अब जहाँ तक अपीलकर्ताओं की ओर से प्रस्तुत किए गए अनुरोध का सवाल है कि संशोधित एन.आई. अधिनियम की धारा 148 में प्रयुक्त भाषा पर विचार करने पर भी, अपीलीय न्यायालय अपीलकर्ता को ऐसी राशि जमा करने का आदेश “दे सकता है” जो ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने या मुआवजे का कम से कम 20% होगा और प्रयुक्त शब्द “करेगा” नहीं है और इसलिए अपीलकर्ता-अभियुक्त को ऐसी राशि जमा करने का निर्देश देने का विवेकाधिकार प्रथम अपीलीय न्यायालय में निहित है और अपीलीय न्यायालय ने इसे अनिवार्य माना है, जो कि अपीलकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार संशोधित एन.आई. अधिनियम की धारा 148 के प्रावधानों के विपरीत होगा, जहाँ तक एन.आई. अधिनियम की संशोधित धारा 148 को समग्र रूप से एन.आई. अधिनियम की संशोधित धारा 148 के उद्देश्यों और कारणों के कथन के साथ पढ़ने पर विचार करने का संबंध है, हालांकि यह

सच है कि एन.आई. अधिनियम में प्रयुक्त शब्द “हो सकता है” है, इसे आम तौर पर एक “नियम” या “करेगा” के रूप में समझा जाना चाहिए और अपीलीय न्यायालय द्वारा जमा करने का निर्देश न देना एक अपवाद है जिसके लिए विशेष कारण बताए जाने चाहिए। इसलिए एनआई अधिनियम की संशोधित धारा 148 अपीलीय न्यायालय को अपील लंबित रहने तक अपीलकर्ता-अभियुक्त को मूल शिकायतकर्ता द्वारा दायर आवेदन पर या यहां तक कि सीआरपीसी की धारा 389 के तहत सजा को निलंबित करने के लिए अपीलकर्ता-अभियुक्त द्वारा दायर आवेदन पर जुर्माना या मुआवजे की राशि जमा करने का निर्देश देने का आदेश पारित करने की शक्ति प्रदान करती है। उपरोक्त को इस तथ्य पर विचार करते हुए समझा जाना आवश्यक है कि एनआई अधिनियम की संशोधित धारा 148 के अनुसार अधिनियम के तहत, ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने या मुआवजे का कम से कम 20% जमा करने का निर्देश दिया जाता है और यह राशि आदेश की तारीख से 60 दिनों की अवधि के भीतर या अपीलकर्ता द्वारा दिखाए गए पर्याप्त कारण के लिए अपीलीय अदालत द्वारा निर्देशित 30 दिनों से अधिक नहीं की गई अतिरिक्त अवधि के भीतर जमा की जानी है। इसलिए, यदि एन.आई. अधिनियम की संशोधित धारा 148 की उद्देश्यपूर्ण व्याख्या इस तरह से की जाती है, तो यह न केवल एन.आई. अधिनियम की धारा 148 में संशोधन के उद्देश्यों और कारणों की पूर्ति करेगा, बल्कि एन.आई. अधिनियम की धारा 138 में भी संशोधन करेगा। परक्राम्य लिखत अधिनियम को समय-समय पर संशोधित किया गया है ताकि अन्य बातों के साथ-साथ चेक के अनादर के अपराध से संबंधित मामलों का शीघ्र निपटारा किया जा सके। यह देखते हुए कि अपील दायर करने और कार्यवाही में स्थगन प्राप्त करने में आसानी के कारण, अनादरित चेक जारी

करने वालों द्वारा की गई देरी की रणनीति के कारण, अनादरित चेक के प्राप्तकर्ता के साथ अन्याय हुआ है, जिसे चेक का मूल्य प्राप्त करने के लिए अदालती कार्यवाही में काफी समय और संसाधन खर्च करने पड़ते हैं और यह देखते हुए कि इस तरह की देरी से चेक लेनदेन की पवित्रता से समझौता हुआ है, संसद ने एन.आई. अधिनियम की धारा 148 में संशोधन करना उचित समझा है। इसलिए, ऐसी उद्देश्यपूर्ण व्याख्या एन.आई. अधिनियम की धारा 148 और एन.आई. अधिनियम की धारा 138 में संशोधन के उद्देश्यों और कारणों को आगे बढ़ाने में सहायक होगी।

22. यहां यह उल्लेख करना उचित नहीं है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 01.09.2018 से पहले दर्ज की गई शिकायतों पर भी 1881 के अधिनियम की धारा 148 की प्रयोज्यता से निपटा था, लेकिन माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष सुरिंदर सिंह देसवाल उर्फ कर्नल एस.एस. देसवाल (उपरोक्त) के मामले में 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए की प्रयोज्यता का मुद्दा चुनौती के अधीन नहीं था।

23. 01.09.2018 से पहले दर्ज शिकायतों पर 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए के नए प्रावधान की प्रयोज्यता के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष आया। **जी.जे. राजा बनाम तेजराज सुराना ने एआईआर 2019 एससी 3817** में रिपोर्ट की और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए को सम्मिलित करने से पहले, 1881 के अधिनियम के तहत कोई प्रावधान नहीं था कि अभियुक्त को 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराए जाने से पहले शिकायतकर्ता को अंतरिम मुआवजा देने का निर्देश दिया जाए। यह माना गया कि 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए के प्रावधान इसके भावी प्रभाव से लागू होंगे और 1881 के अधिनियम की धारा

148 के प्रावधान 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध के लिए अभियुक्त को दोषी ठहराए जाने के बाद इसके भावी प्रभाव से लागू नहीं होंगे और इसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय के पैरा 20 से 24 में इस प्रकार माना:

-

“20. यह बताया जाना चाहिए कि अधिनियम में धारा 143 ए को शामिल करने से पहले कानून की किताब में ऐसा कोई प्रावधान नहीं था जिसके तहत 4 (1997) 7 एससीसी 131 आपराधिक अपील संख्या 1160/2019 @ एसएलपी (सीआरएल) संख्या 3342/2019 जीजे राजा बनाम तेजराज सुराना के तहत किसी अभियुक्त के अपराध की घोषणा से पहले या यहां तक कि संबंधित अपराध के लिए उसकी दोषसिद्धि से पहले भी, उसे अंतरिम मुआवजा देने या जमा करने के लिए कहा जा सकता था। संहिता की धारा 421 या धारा 357 के माध्यम से जुर्माना या मुआवजे का अधिरोपण और परिणामी वसूली भी तभी हो सकती है जब व्यक्ति किसी अपराध का दोषी पाया जाए। अधिनियम में धारा 143 ए की शुरुआत के द्वारा कानून की यही स्थिति बदलने की कोशिश की गई थी। अब यह एक दायित्व लगाता है कि अपने अपराध की घोषणा या दोषसिद्धि के आदेश से पहले भी, अभियुक्त राज्य मशीनरी की सहायता से धन की वसूली के लिए भू-राजस्व के बकाया के लिए, अंतरिम मुआवजा देने के लिए बाध्य होना पड़ेगा। इसलिए, उस व्यक्ति पर एक नई अक्षमता या दायित्व आ जाएगा। इस प्रकार, यह स्थिति कर्मचारी राज्य बीमा निगम मामले में विचाराधीन स्थिति से बिल्कुल अलग है।

21. हालांकि कुछ अलग संदर्भ में उत्पन्न, धारा 142 (बी) का प्रावधान जो 2002 के संशोधन अधिनियम 55 द्वारा अधिनियम में डाला गया था, जिसके तहत अब अधिनियम की धारा 142 (बी) के

तहत निर्धारित अवधि से परे दायर की गई शिकायत के संबंध में भी संज्ञान लिया जा सकता है, यह न्यायालय द्वारा वाद अनिल कुमार गोयल बनाम किशन चंद कौरा में यह अभिधारित किया गया कि आपराधिक अपील संख्या **1160/2019 @ एसएलपी (सीआरएल) संख्या. 3342 of 2019**, जी.जे. राजा बनाम तेजराज सुराणा का प्रभाव भावी होगा। यह अवलोकित किया गया कि :-

"10. 2002 के अधिनियम 55 द्वारा धारा 142(बी) में किए गए संशोधन में ऐसा कुछ भी नहीं है कि उसे पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू करने का इरादा था। वास्तव में, प्रतिवादी का तो यह रुख था ही नहीं। ज़ाहिर है, जब 28 नवंबर, 1998 को शिकायत दर्ज की गई थी, तो प्रतिवादी यह अनुमान नहीं लगा सकता था कि भविष्य में पर्याप्त कारण बताए जाने पर सीमा अवधि बढ़ाने का प्रावधान करने वाला कोई संशोधन लागू किया जाएगा।"

22. हमारे विचार में, अधिनियम की धारा 143 ए की प्रयोज्यता, इसलिए, भावी प्रकृति की मानी जानी चाहिए और उन मामलों तक सीमित होनी चाहिए जहां अपराध धारा 143 ए के लागू होने के बाद किए गए थे, ताकि अभियुक्त को ऐसा अंतरिम मुआवजा देने के लिए मजबूर किया जा सके।

23. हालाँकि, हमें सुरिंदर सिंह देसवाल एवं अन्य बनाम वीरेंद्र गांधी मामले में इस न्यायालय के एक निर्णय पर ध्यान देना चाहिए, जहाँ अधिनियम की धारा 148, जिसे 01.09.2018 से उसी संशोधन अधिनियम 20/2018 द्वारा भी प्रस्तुत किया गया था, को इस न्यायालय ने पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू माना था। अधिनियम की धारा 143 ए, जो दोषसिद्धि के आदेश या दोषसिद्धि की घोषणा से पहले ही मुकदमे के चरण में लागू होती है, के विपरीत, अधिनियम

की धारा 148 अपीलीय चरण में लागू होती है जहाँ अभियुक्त को अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध का दोषी पाया जा चुका है। यह कहा जा सकता है कि अधिनियम की धारा 148 में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो अधिनियम की धारा 143 ए की उप-धारा (5) के समान हो। हालाँकि, वास्तव में, धारा 143 ए की उप-धारा (5) के समान किसी प्रावधान की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि संहिता की धाराएँ 421 और 357, जो दोषसिद्धि के बाद लागू होती हैं, ऐसी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त हैं। इस अर्थ में, उक्त धारा 148 पहले से मौजूद तंत्र और सिद्धांतों पर निर्भर करती है और अधिनियम की धारा 143 ए द्वारा उत्पन्न प्रकृति की कोई नई अक्षमता उत्पन्न नहीं करती है। इसलिए, सुरिंदर सिंह देसवाल मामले में इस न्यायालय का निर्णय एक अलग आधार पर आता है।

24. अंतिम विश्लेषण में, हम धारा 143 ए को भावी प्रवर्तन में मानते हैं और उक्त धारा 143 ए के प्रावधानों को केवल उन्हीं मामलों में लागू किया जा सकता है जहाँ अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत अपराध उक्त धारा 143 ए के कानून में शामिल होने के बाद किया गया हो। परिणामस्वरूप, विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को रद्द किया जाना आवश्यक है। इस न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम निर्देश के अनुसरण में अपीलकर्ता द्वारा जमा की गई धनराशि, इस आदेश की तिथि से दो सप्ताह के भीतर उस पर अर्जित ब्याज सहित अपीलकर्ता को वापस कर दी जाएगी।

24. जी.जे. राजा (उपरोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित उपर्युक्त निर्णय को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय की समन्वय पीठों

द्वारा बुध राम रेगर बनाम सांवर मल मोची के मामले में 2019 (3) आरएलडब्ल्यू 2673 (राजस्थान) और सिद्धार्थ जैन बनाम निधि फाइनेंशियल सर्विसेज के मामले में 2023 (4) डब्ल्यूएलसी 719 में रिपोर्ट किया गया है कि 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए के तहत निहित प्रावधान का कोई पूर्वव्यापी आवेदन नहीं है।

25. जी.जे. राजा (उपरोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के आलोक में यह स्पष्ट है कि 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए का भावी प्रभाव है और यह 1881 के अधिनियम की धारा 143 ए के लागू होने/समाविष्ट होने के बाद अर्थात् 01.09.2018 के बाद धारा 138 के तहत दायर शिकायतों पर लागू है। यह प्रावधान 01.09.2018 से पहले दायर शिकायतों पर पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं डाल सकता है।

26. उपर्युक्त चर्चा के परिप्रेक्ष्य में, ये याचिकाएँ स्वीकार किए जाने योग्य हैं और एतद्वारा स्वीकार की जाती हैं। विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश निरस्त किए जाते हैं और एतद्वारा अपास्त किए जाते हैं। किसी भी आदेश के अनुसरण में याचिकाकर्ताओं द्वारा जमा की गई राशि (यदि कोई हो) उन्हें (जैसा भी मामला हो) इस आदेश की प्राप्ति की तारीख से चार सप्ताह की अवधि के भीतर ब्याज सहित वापस कर दी जाएगी।

27. स्थगन आवेदन तथा अन्य सभी आवेदन (यदि कोई लंबित हो) भी निराकृत माने जाते हैं।

28. लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं।

(अनूप कुमार ढांड), जे

नीरू/21-23

"अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी अधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।"



Tarun Mehra

Advocate
